क्षायिक क्षायोपशमिक भाव

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भाव चित्त की वृत्ति को प्रकट करते हैं। जैसे उपशमित कीचड़ वाले जल को दूसरे साफ बर्तन में बदल देने पर कीचड़ का अत्यन्त अभाव हो जाता है, वैसे ही कर्मों का आत्मा से सर्वथा दूर हो जाना क्षय है और क्षय का कारण क्षायिक है। क्षायिक भाव नौ प्रकार के हैं। ज्ञानावरण कर्म के अत्यन्त क्षय से क्षायिक ज्ञान क्षायिक भाव होता है। समग्र दर्शनावरण के क्षय से केवलदर्शन क्षायिक भाव होता है। सकल दानान्तराय कर्म के अत्यन्त क्षय से अनन्त प्राणियों का अनुग्रह करने वाला अभयदान क्षायिक दान होता है। सकल लाभान्तराय कर्म के अत्यन्त नष्ट हो जाने पर परम शुभ पुद्गलों का ग्रहण क्षायिक लाभ है। सम्पूर्ण भोगान्तराय कर्म के नष्ट हो जाने से अनन्त क्षायिकोपभोग होता है। समस्त भोगान्तराय के नाश से उत्पन्न होने वाला सातिशय भोग क्षायिक भोग है। इसी से पुष्प वृष्टि, गन्धोदक वृष्टि, चरण निक्षेप स्थान में सप्तकमलों की पंक्ति की रचना आदि अतिशय होते हैं।

सम्पूर्ण संघ उपभोगान्तराय कर्म के नष्ट हो जाने से अनन्त क्षायिकोपभोग होता है। वीर्यान्तराय कर्म के अत्यन्त क्षय होने से अनन्त वीर्य उत्पन्न होता है। मोह कर्म की प्रकृतियों के सम्पूर्ण नष्ट हो जाने से क्षायिक सम्यक्त्व होता है। अनन्तानुबंधी चतुष्क, मिथ्यात्व, सम्यक् मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति इनको छोड़कर शेष चारित्र मोह की इक्कीस प्रकृतियों के क्षय से क्षायिक चारित्र होता है। सिद्धत्व में क्षायिक भाव रहता है। यद्यपि शरीर नाम और तीर्थंकर नाम कर्म का अभाव होने से भी सिद्धों में जैसे केवलज्ञान में अनन्त वीर्य है उसी प्रकार परमानन्द अव्यावाध सुख रूप से लब्धियां रहती हैं। जैसे पैरों के पृथक निर्देश से अंजुलि सामान्य का कथन हो जाता है उसी प्रकार सभी क्षायिक भावों में व्यापक सिद्धत्व का कथन हो जाता है।

जिस प्रकार जल में कतकादि द्रव्य के सम्बन्ध से कुछ कीचड़ का अभाव हो जाता है और कुछ कीचड़ बना रहता है उसी प्रकार उभयरूप भाव, मिश्रभाव अथवा क्षायोपशिक भाव कहलाता है। क्षीण मद शक्ति वाले कोदों के समान उभयात्मक परिणाम को मिश्र भाव कहते

हैं। जैसे जल के प्रक्षालन करने पर कुछ कोदों की मद शक्ति क्षीण हो जाती है और कुछ अपक्षीण हो जाती है उसी प्रकार क्षायिक कारणों का सन्निधान होने पर परिणामों की निर्मलता से कर्मों के एकदेश क्षय और एकदेश कर्मों की शक्ति का उपशम होने पर उभयात्मक मिश्र भाव होता है। क्षायोपशिक भाव के अठारह भेद हैं। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्याय ज्ञान क्षायोपशमिक हैं। वीर्यान्तराय और मति, श्रुतज्ञानावरण के सर्वघाति स्पर्धकों का उदय, क्षय एवं उन्हीं आगामी उदय में आने वाले स्पर्धकों का सदवस्था रूप उपशम होने पर तथा देशघाती स्पर्धकों का उदय होने पर मतिज्ञान श्रृतज्ञान होता है। अवधिज्ञान और मनःपर्याय के भी स्वावरण क्षयोपशम भेद से क्षयोपशमपना है। अज्ञान तीन प्रकार के क्षायोपशमिक होते हैं। मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगावधिज्ञान इनमें अज्ञानपना मिथ्यात्व कर्म के उदय के कारण ये तीनों अज्ञान होते हैं। तीन प्रकार के दर्शन–चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन अपने–अपने आवरण के क्षयोपशम से होते हैं। लब्धि,दान, लोभ, भोग, उपभोग और वीर्य ये पांचों अपने–अपने आवरण के क्षयोपशम से होते हैं।

जब आत्मा विकास की ओर अग्रसर रहता है तब अध्यवसायों की प्रशस्तता और लेश्या का विशुद्धिकरण होता है। कर्मों के क्षय और उपशम के साथ उदय की प्रक्रिया भी इसमें चालू रहती है। व्यक्तित्व विकास में सबसे बड़ी बाधा है कषाय। इसी के कारण अवरोध और अशुभ का संयोग व्यक्तित्व के साथ बना रहता है। व्यक्ति कुछ जानना चाहता है, सही दृष्टिकोण बनाना चाहता है, किन्तु आवरण के कारण न तो वह जान पाता है और न सही देख पाता है। यह ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्म का कार्य है। व्यक्ति सदैव अच्छा आचरण करना चाहता है किन्तु मूर्छा और विकृति पवित्रता को दूषित कर उसको मूढ़ बना देती है। यह कार्य मोहनीय कर्म द्वारा होता है।

व्यक्ति अपने आंतरिक शक्तियों का विकास चाहता है। उसके पास सब कुछ होने के बाद भी अंतराय कर्म द्वारा अवरोध पैदा किया जाता है। हर व्यक्ति के पास योग्यात्मक और क्रियात्मक शक्तियां हैं। योग्यात्मक शक्ति आत्मा का गुण है। क्रियात्मक शक्ति शरीर के योग से होती है। कर्मशास्त्र में योग्यात्मक क्षमता को लब्धिवीर्य और क्रियात्मक क्षमता को करणवीर्य कहा गया है। जिसमें लब्धवीर्य नहीं होता है वह उस शक्ति का विकास कभी कर ही नहीं सकता।

लब्धिवीर्य की विद्यमानता में भी करणवीर्य के अभाव में कार्य निष्पन्न नहीं हो सकता। अन्तराय का पर्दा जब हटता है तब व्यक्ति अपनी शक्ति का उपयोग करने में सफल होता है। ये घातीकर्म के परिणाम है।

जीवन के साथ शुभ–अशुभ का संयोग अघाति कर्म के कारण होता है। ये आत्मगुणों को हानि तो नहीं पहुंचा सकते पर देह संरचना सम्मान प्रतिष्ठा आदि में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। विघ्नों के मीटने पर समग्र व्यक्तित्व का विकास होता है। जिसे क्षायिक एवं क्षायोपशमिक कह सकते हैं। इससे शुभ लेश्याएं प्रकट होती हैं। विशिष्ट पवित्रता की स्थिति में परम शुक्ल लेश्या का जागरण हो जाता है।